लोकायत के पचास वर्ष

रामकृष्ण भट्टाचार्य

देबीप्रसाद चट्टोपाध्याय (1918-1993) की पुस्तक *लोकायतः ए स्टडी इन एन्श्यंट इण्डियन मटेरिएलिज़्म* (प्राचीन भारतीय भौतिकवाद का एक अध्ययन) के प्रकाशन ने भारतीय दर्शन के अध्ययन के एक नए दौर का आगाज़ किया था। यह पुस्तक पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस द्वारा 1959 में प्रकाशित की गई थी। 678 पृष्ठों की इस पुस्तक में शामिल विषयों की विविधता हैरतअंगेज़ थी और दुनिया भर के विद्वानों ने एकमत से इसका स्वागत किया था। कई खंडों में लिखित *साइन्स एण्ड सिविलाइज़ेशन इन चायना* के मशहूर लेखक जोसेफ नीडहैम ने चट्टोपाध्याय को लिखा था, "मेरे पुस्तक संग्रह में आपकी पुस्तक का विशिष्ट स्थान रहेगा। यह सचमुच असाधारण बात है कि हम दोनों ने प्राचीन चीनी व प्राचीन भारतीय सभ्यताओं का अध्ययन करके इतने एक जैसे नतीजे हासिल किए हैं।" फ्रांस में इण्डोलॉजी के विद्वान लुई रेनो, बर्मिंगहैम विश्वविद्यालय में यूनानी भाषा के प्रोफेसर जॉर्ज थॉमसन, प्रसिद्ध वैज्ञानिक जे.बी.एस. हाल्डेन, वाल्टर रुबेन जैसी हस्तियों ने इस पुस्तक का स्वागत किया था।

देबीप्रसाद चट्टोपाध्याय
(1918-1993)

इस पुस्तक के प्रकाशन की स्वर्ण जयंती देबीप्रसाद चट्टोपाध्याय और उनकी रचनाओं के पुनरावलोकन का सही अवसर है।

देबीप्रसाद चट्टोपाध्याय का जन्म 19 नवंबर 1918 को कोलकाता में हुआ था। शुरुआती शिक्षा मित्र संस्थान, भवानीपुर, कोलकाता में पूरी करने के बाद दर्शन शास्त्र का अध्ययन प्रेसिडेंसी कॉलेज, कोलकाता और कलकत्ता विश्वविद्यालय में किया। वे बी.ए. ऑनर्स (1939) और एम.ए. (1942) दोनों में प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुए थे। उन्होंने एम.ए. में विशेष विषय के रूप में भारतीय दर्शन (वेदांत समूह) लिया था। यह विडंबना ही है क्योंकि अपने आगे के जीवन में वे वेदांत और अन्य गैर-भौतिकवादी दर्शनों के खिलाफ सतत संघर्ष करते रहे।

एक अथक शोधकर्ता और उर्वर लेखक चट्टोपाध्याय ने पचास से अधिक पुस्तकें लिखी हैं (जिनमें से कई तो अच्छी-खासी मोटी-मोटी हैं) और कई पुस्तकों का संपादन किया है। बांग्ला और अंग्रेज़ी में लिखित दर्शन शास्त्र सम्बंधी अपनी किताबों के लिए प्रसिद्धि पाने से पहले ही वे एक बांग्ला साहित्यकार के रूप में पहचाने जाने लगे थे। उस समय के अन्य साहित्यकारों से अलग उनकी शैली आम जीवन में रची-बसी थी। वे प्रगतिशील लेखक संघ (आगे चलकर जिसका नाम फासिस्ट-विरोधी लेखक संघ हुआ) में सक्रिय थे। 1940 के दशक में वे बंगाल के प्रतिष्ठित कवि बिष्णु डे के साथ जुड़े थे।

1940 व 1950 के दशकों में चट्टोपाध्याय की पहचान बंगाल में एक बाल साहित्यकार के रूप में ज़्यादा थी। उन्होंने बच्चों के लिए कहानियां, उपन्यास, लोकप्रिय विज्ञान पुस्तकें और जीवनियां लिखीं। अपने बड़े भाई कामाक्षी प्रसाद के साथ मिलकर वे बच्चों के लिए एक पत्रिका रंगमशाल और संकेत नामक एक साहित्यिक पत्रिका का संपादन करते थे। उन्होंने किशोर बंगाली पाठकों के लिए छोटी-छोटी पुस्तकों की एक श्रृंखला का संपादन भी किया था। इनमें *जानबर कथा* (ज्ञान की किताब), *अमराओ होते पारी* (हम भी बन सकते हैं), *विज्ञान विचित्र* (विविध विज्ञान) जैसे कई विषय शामिल थे। मानव विज्ञान, जीव विज्ञान, मनोविज्ञान वगैरह पर उनकी अपनी पुस्तकें लोकप्रिय विज्ञान लेखन की प्रतिमान हैं। बांग्ला गद्य को एक नई ऊर्जा देने का श्रेय सुभाष मुखोपाध्याय के साथ देबीप्रसाद चट्टोपाध्याय

को भी जाता है।

इससे भी पीछे जाएं, तो अपने स्नातक काल में वे एक कवि थे। वे एक अवां गार्द (प्रयोगधर्मी) समूह से जुड़े थे जिसने टैगोर के बाद बंगाली कविता को एक नया स्वर दिया था। उनके इस युवा उद्यम का एकमात्र साक्ष्य एक दुबला-पतला कविता संग्रह *कायेतकी नायक* (चंद नायक) है। उन्होंने आधुनिक बंगाली कविताओं के अंग्रेज़ी अनुवाद का एक संग्रह भी प्रकाशित किया था (1945)। अनुवाद का काम मुख्य रूप से कलकत्ता में नियुक्त एक ब्रिटिश सिपाही मार्टिन कर्कमैन ने किया था। आज भी इस किताब की सेकंड हैण्ड प्रतियां काफी अच्छे दामों पर बिकती हैं। चट्टोपाध्याय ने 1958 में माणिक बंद्योपाध्याय की कहानियों का एक संकलन भी अंग्रेज़ी में प्रकाशित किया था।

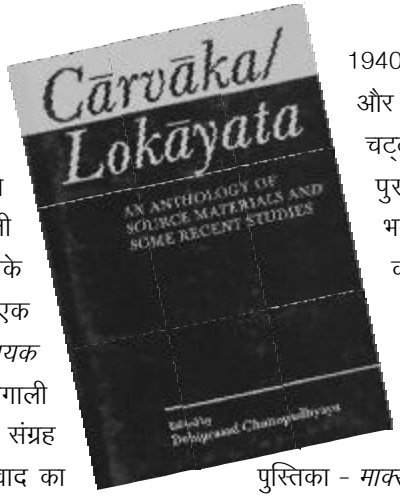

फ्रंटियर नामक मासिक पत्रिका के संस्थापक और कवि समर सेन ने 1940 के दशक के अंतिम वर्षों में उन्हें मार्क्स व एंगेल्स द्वारा लिखित कम्युनिस्ट पार्टी के घोषणा पत्र से परिचित कराया था। समर सेन और चट्टोपाध्याय की मित्रता आजीवन कायम रही। इसके बाद श्रमिक नेता बंकिम मुखोपाध्याय और मेरठ षड्यंत्र मामले के लिए प्रसिद्ध राधारमण मित्र के पत्रों ने मार्क्सवाद के सिद्धांत व कामकाज से चट्टोपाध्याय का परिचय और प्रगाढ़ किया। कुछ समय तक रामकृष्ण मैत्रा और सुभाष मुखोपाध्याय के साथ लेबर पार्टी में रहने के बाद चट्टोपाध्याय 1944 में भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी में शामिल हो गए।

1951 में कम्युनिस्ट नेता भवानीशंकर सेनगुप्त ने उन्हें सुझाव दिया कि वे मार्क्सवाद को भारतीय दर्शन के अध्ययन में लागू करें। इस सुझाव ने चट्टोपाध्याय के जीवन की दिशा ही बदल दी। उस समय से उन्होंने अपना पूरा ध्यान हमारे दर्शन में भौतिकवादी व तर्कसंगत धाराओं व वैज्ञानिक धरोहर की खोजबीन करने में लगाया और यह खोजबीन आजीवन जारी रही।

भवानी सेन ने एक और महत्त्वपूर्ण योगदान दिया था। 1940 के पूरे दशक में चट्टोपाध्याय मार्क्स और फ्रायड के बीच झूलते रहे थे। 1949 में चट्टोपाध्याय द्वारा सेक्सॉलॉजी पर लिखित पुस्तक की कठोर आलोचना करके भवानीशंकर ने उन्हें दृढ़तापूर्वक मार्क्सवाद की राह पर चलने को प्रेरित किया। 1950 के दशक के प्रारंभ में लिखी गई उनकी पुस्तकों में उनके द्वारा मार्क्सवाद को अंतिम रूप से अपनाने की झलक मिलती है। एक परिचय पुस्तिका - *मार्क्सवाद* (1952) - आज भी नौसिखियों के लिए द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद के अध्ययन हेतु सही पुस्तक मानी जाती है।

चट्टोपाध्याय द्वारा भारतीय दर्शन के अन्वेषण का प्रथम प्रतिफल *लोकायत* थी। यह पहले बांग्ला (1956) और बाद में अंग्रेज़ी (1959) में नए सिरे से लिखी जाकर प्रकाशित हुई थी। दोनों ही कई मर्तबा पुनर्मुद्रित हो चुकी हैं और कई भाषाओं में अनुदित हो चुकी हैं। आज भी यही उनकी सबसे मशहूर कृति है। जैसा कि दुनिया भर में विद्वानों द्वारा की गई समीक्षाओं से पता चलता है, इस पुस्तक ने भारत में भौतिकवाद के अध्ययन की लंबे समय से अपूरित ज़रूरत को पूरा किया था और अध्ययन के नए आयाम खोले थे। यह कहना अतिश्योक्ति न होगी कि *लोकायत* ने कई शोधकर्ताओं को दर्शन शास्त्र को एक नई रोशनी में देखना सिखाया है और आने वाली पीढ़ियों को भी सिखाती रहेगी। चट्टोपाध्याय ने उस समय उपलब्ध खोजबीन के सारे मॉडल्स से किनारा करते हुए मानव विज्ञान में भौतिकवाद की जड़ें खोजने के प्रयास किए थे। उन्होंने सांख्य और तंत्र का एक सर्वथा नया नज़रिया पेश किया था और वेदों में उन प्रमाणों का अध्ययन किया था जैसा पहले कभी नहीं किया गया था।

लोकायत के बाद आई एक छोटी-सी किताब - *पॉपुलर इंट्रोडक्शन टु इण्डियन फिलॉसॉफी* (1964), जो दर्शन के विभिन्न मतों का एक विहंगावलोकन प्रस्तुत करती है। यह सायन-माधव द्वारा चौदहवीं सदी में लिखित ग्रंथ *सर्वदर्शनसंग्रह*

के प्रतिग्रंथ के रूप में लिखी गई थी। *सर्वदर्शनसंग्रह* लोकायत से शुरू होकर वेदांत पर समाप्त होती है। चट्टोपाध्याय की पुस्तक ज़्यादा सलीकेदार थी। इसमें दर्शन के विभिन्न मतों के विकास को उनके ऐतिहासिक मूल से जोड़कर देखा गया था।

इण्डियन एथीज़्म (भारतीय नास्तिकता, 1969) में चट्टोपाध्याय ने आस्तिक (वैदिक) मतों की भी चर्चा की है और दर्शाया है कि उनमें भी नास्तिक अंतर्वस्तु निहित है। उन्होंने दर्शाया था कि उर-सांख्य और उर-न्याय यकीनन नास्तिक हैं और यही बात स्वयं मीमांसा पर भी लागू होती है। यह पुस्तक पिछली पुस्तक की अपेक्षा कहीं ज़्यादा गहराई में जाती है और तर्क को काफी स्पष्टता से रखा गया है। इस पुस्तक के लिए दस्तावेज़ीकरण भी काफी अधिक किया गया था।

1976 में आई थी *व्हाट इज़ लिविंग एण्ड व्हाट इज़ डेड इन इण्डियन फिलॉसॉफी*। इसमें नए धरातल की खोजबीन की गई है। चट्टोपाध्याय के संतुलित विश्लेषण ने बौद्ध और न्याय दोनों दर्शनों के कई सकारात्मक तत्वों को पुनः स्थापित करने में मदद दी। यह अपने किस्म की एक क्लासिक है।

जब 1977 में उन्होंने *साइन्स एण्ड टेक्नॉलॉजी इन एन्श्यंट इण्डिया* (प्राचीन भारत में विज्ञान व टेक्नॉलॉजी) लिखी, तो स्पष्ट था कि वे नए-नए क्षेत्रों में चहलकदमी कर रहे हैं। एक मायने में तो यह उनकी पूर्व कृतियों का विस्तार ही है। इसमें उनकी कोशिश यह थी कि चिकित्सा व शल्य क्रिया सम्बंधी दो भारतीय ग्रंथों - चरक संहिता और सुश्रुत संहिता - के धार्मिक तामझाम में से वैज्ञानिक सत् निकाल लें। चट्टोपाध्याय के गुरु सुरेंद्रनाथ दासगुप्त पहले ही प्राचीन भारत के चिकित्सा घरानों की 'दार्शनिक अटकलों' के बारे में कुछ कह चुके थे मगर चट्टोपाध्याय इसके काफी आगे गए। उन्होंने दर्शाया कि 'प्रति-विचारधारा' (counter-ideology) यानी हिंदू नियम-निर्धारकों ने समाज में स्थापित ताकतों के साथ मिलकर वैज्ञानिकों को विवश किया था कि वे राज्य-अनुमोदित रूढ़िवाद को जगह दें। उन्हें ऐसी चीज़ें शामिल करने को विवश किया गया जो विज्ञान के बाहर थीं और विज्ञान को कमज़ोर करने वाली थीं। चट्टोपाध्याय का तर्क था कि इसी वजह से भारत में चिकित्सा और शल्य क्रिया, अपनी शानदार शुरुआत के बावजूद, ज़्यादा सटीक विज्ञान का रूप नहीं ले पाईं।

इस कृति में चट्टोपाध्याय ने दिखाया कि वे विचारों के श्रेष्ठ इतिहासकार हैं। वे पहले व्यक्ति थे जिन्होंने दर्शाया था कि चिकित्सा व शल्य क्रिया के मूल संस्कृत ग्रंथों में कितनी घालमेल है। इस विचित्र मिश्रण की व्याख्या उन्होंने लकीर के फकीर धर्म के हस्तक्षेप के आधार पर की। उन्होंने स्पष्ट किया कि चिकित्सा विज्ञान का सबसे स्पष्ट विरोध भारत के तथाकथित पवित्र ग्रंथों में मिलता है - खास तौर से यजुर्वेद और मनुस्मृति जैसी बाद की स्मृतियों में। आगे चलकर चट्टोपाध्याय ने बांग्ला में एक और पुस्तक लिखी थी *प्राचीन भारते चिकित्सा विज्ञान* (1992) जिसमें ये बातें सार रूप में प्रस्तुत की गई थीं।

लोकायत के बाद *साइन्स एण्ड टेक्नॉलॉजी इन एंश्यंट इण्डिया* को चट्टोपाध्याय के लेखन में एक और निर्णायक पड़ाव माना जा सकता है। अब उनका ध्यान प्राचीन भारत में विज्ञान के इतिहास व दर्शन पर केंद्रित हो गया। 1978 में वे सिटी कॉलेज, कोलकाता से सेवानिवृत्त हुए। यहां उन्होंने दो दशक से भी ज़्यादा समय तक स्नातक छात्रों को तर्क और दर्शन पढ़ाया था। सेवानिवृत्त होने के बाद उन्होंने एक बार फिर छात्र के रूप में प्राचीन विज्ञान की विभिन्न शाखाओं का अध्ययन शुरू किया। इस दौर में उन्होंने चिकित्सा व शल्य क्रिया के अलावा खगोल शास्त्र व ज्यामिति का भी अध्ययन किया। उनकी महत्त्वपूर्ण कृति *हिस्ट्री ऑफ साइन्स एण्ड टेक्नॉलॉजी इन एन्श्यंट इण्डिया* तीन खंडों में है (1986, 1991, 1996; तीसरा खंड मरणोपरांत प्रकाशित हुआ था)। यह कृति उनकी बाकी सारी किताबों से अलग है।

अपेक्षाकृत सुविधाजनक प्रस्थान बिंदु वैदिक भारत से शुरू न करके उन्होंने सिंधु घाटी सभ्यता पर ध्यान केंद्रित किया है। इसके परिणाम बहुत अच्छे रहे। खास तौर से इसने वह महत्त्वपूर्ण गुमशुदा कड़ी उपलब्ध कराई जिसे तिलक व जैकोबी खोजते रहे थे। इस तरीके से वेदांग

ज्योतिष का काल निर्धारित करने में भी मदद मिली। विज्ञान के उद्भव को प्राचीन भारत में शहरीकरण की दो अवधियों से जोड़कर देखने से पूर्वी विश्व में विज्ञान व टेक्नॉलॉजी के इतिहास के अध्ययन का एक सर्वथा नया नज़रिया सामने आया। उन्होंने इस विषय को उस परंपरा से मुक्त किया जिसमें उपलब्धियों को सूचीबद्ध किया जाता था मगर सामाजिक-ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का कोई उल्लेख नहीं होता था। इसके अलावा, जिस ढंग से उन्होंने ईंट बनाने की तकनीक और शुल्बसूत्रों (हवन वेदियां बनाने की कला) को जोड़कर देखा, उससे सिंधु घाटी की सभ्यता, वैदिक युग और उसके बाद के काल में एक निरंतरता स्थापित हुई।

विज्ञान के इतिहास में इस व्यस्तता के बावजूद चट्टोपाध्याय अपना प्रथम प्रेम-दर्शन और खासकर मार्क्सवादी दर्शन - भूले नहीं थे। उन्होंने *लेनिन दी फिलॉसफर* लिखी, पहले अंग्रेज़ी में (1979) और फिर बांग्ला (1980) में। इस क्षेत्र में उनकी आखरी कृति थी *भारते वस्तुवाद प्रसंगे*। यह भारत में भौतिकवाद की एक समीक्षा थी। बाद में उन्होंने स्वयं ही इसका अंग्रेज़ी अनुवाद - *इन डिफेन्स ऑफ मटेरिएलिज़्म इन एन्श्यंट इण्डिया* - प्रकाशित किया।

जीर्ण बीमारी, बुनियादी सुविधाओं के अभाव, प्रकाशन में अनावश्यक विलंब, ये सब आजीवन उनके कदमों को रोकते रहे। इन सब दिक्कतों के बावजूद, उपरोक्त पुस्तकों के अलावा वे एक शोध पत्रिका (*इण्डियन स्टडीज़: पास्ट एण्ड प्रेज़ेंट*) का संपादन करते रहे। चट्टोपाध्याय ने मृणालकांति गंगोपाध्याय के साथ मिलकर न्यायसूत्र व उस पर वात्स्यायन की टीका का अनुवाद किया। उनके अन्य कार्यों में शामिल हैं: *फणिभूषण तर्कवागीष* का अनुवाद, लामा तारनाथ की तिब्बती रचना *हिस्ट्री ऑफ बुद्धिज़्म इन इण्डिया* का संपूर्ण अंग्रेज़ी अनुवाद, *हिस्ट्री एण्ड सोसायटी: स्टडीज़ इन हिस्ट्री ऑफ इण्डियन फिलॉसफी* शीर्षक से आलेखों का एक संकलन, *हिस्ट्री ऑफ साइन्स इन इण्डिया* नामक एंथॉलॉजी, *मार्क्सिज़्म एण्ड इंडॉलॉजी* शीर्षक से आलेखों का संकलन, *चार्वाक/लोकायत: एन एंथॉलॉजी ऑफ सोर्स मटेरियल एण्ड सम रीसेंट स्टडीज़*। चट्टोपाध्याय ने आठ खंडों की एक लोकप्रिय श्रृंखला - *ग्लोबल फिलॉसफी फॉर एवरीवन* - का नियोजन व संपादन भी किया। इनमें से तीन खंड स्वयं उन्होंने लिखे थे। उनका अंतिम संपादकीय कार्य *स्टडीज़ इन इण्डियन कल्चर* वृहत पैमाने पर सोचा गया था मगर इसका एक ही खंड तैयार हो सका। कुल मिलाकर देखें, तो उनकी रचनाओं की रेंज विशाल है।

दो अन्य रचनाओं का उल्लेख ज़रूरी है। पहली, रजनी पाम दत्त की *इण्डिया टुडे* नामक पुस्तक का संक्षिप्त संस्करण (*इण्डिया टुडे एण्ड टुमारो*)। यह काम दिलीप बोस के साथ मिलकर किया गया था और इसे जर्मन में अनुदित किया गया। दूसरी, रमेश चंद्र दत्त द्वारा ऋगवेद संहिता के बांग्ला अनुवाद का पुनःप्रकाशन, जिसमें अन्य शोधकर्ताओं की सामग्री को जोड़ा गया था और इसमें स्वयं चट्टोपाध्याय ने वैदिक साहित्य का एक सार प्रस्तुत किया था।

चट्टोपाध्याय अपने संक्षिप्त जीवन काल में इतना कुछ कैसे कर पाए? इसका एक प्रमुख कारण यह है कि वे हमेशा निष्ठावान युवा और बुज़ुर्ग सहयोगियों की टीम बना पाते थे। नियोजन, लेखन, कॉपी एडिटिंग, प्रूफ रीडिंग, सब कुछ बहुत सहजता और तालमेल से चलता था। टीम का हर व्यक्ति काम में अपनापन महसूस करता था। चट्टोपाध्याय लोगों को उनका श्रेय देने में कभी कंजूसी नहीं करते थे।

आधिकारिक सम्मान उनके जीवन में काफी देर से आए थे। 1975 में उन्हें जर्मन डेमोक्रेटिक रिपब्लिक की विज्ञान अकादमी का सदस्य बनाया गया और 1981 में तत्कालीन सोवियत संघ की विज्ञान अकादमी ने उन्हें मानद डॉक्टरेट की उपाधि से विभूषित किया। मगर चट्टोपाध्याय को तब ज़्यादा संतोष मिलता था जब वे देखते कि युवा कार्यकर्ता अंधविश्वासी ताकतों के विरुद्ध अपने संघर्ष में उनकी रचनाओं का उपयोग कर रहे हैं। उन्होंने 1991 में एक बांग्ला मासिक *उत्स मानुष* के लिए बांग्ला में एक पुस्तिका तैयार की थी - *प्रतिरोध*। इसमें राममोहन रॉय से लेकर सत्येंद्रनाथ बोस जैसे मशहूर लोगों के निबंधों को संकलित किया गया था। इस पुस्तिका में तर्कवादी विचारों और अनुदार व रुढ़िवादी विचारों के बीच सतत संघर्ष को रेखांकित किया गया है।

मार्क्स, एंगेल्स और लेनिन के अलावा गॉर्डन चाइल्ड, जॉर्ज थॉमसन और जोसेफ नीडहैम ने उन्हें काफी प्रभावित

किया था। वे जे.डी. बर्नाल की *साइन्स इन हिस्ट्री* का उपयोग एक हैण्डबुक के रूप में करते थे। उनके मन में वाल्टर रुबेन, जॉन समरविल, और बरोज़ डनहैम के प्रति बहुत सम्मान था। डी.डी. कोसांबी, ट्रेवर लिंग और डेल रिएप तो उनके घनिष्ठ मित्र थे।

चट्टोपाध्याय कई सारे एनसायक्लोपीडिया प्रोजेक्ट्स, बांग्ला व अंग्रेज़ी दोनों, से भी जुड़े रहे। रेशनेलिस्ट व जन विज्ञान आंदोलनों से जुड़े युवाओं को मदद करने को वे हमेशा तैयार रहते थे। होनहार शोधकर्ताओं का मार्गदर्शन करने को तो वे बहुत प्राथमिकता देते थे। हालांकि पसंद-नापसंद को लेकर वे बहुत सख्त थे मगर अपने मतों पर पुनर्विचार करने को सदा तत्पर रहते थे। पाश्चात्य मार्क्सवाद और न्यू लेफ्ट जैसी फैशनेबल धाराओं ने उन्हें कभी प्रभावित नहीं किया और न ही वे उत्तर-आधुनिक आतिशबाज़ी से हमदर्दी रख पाए। वे जन्मजात शास्त्रार्थवादी थे और दोटूक बात कहने से कतराते नहीं थे।

एक दृढ़ मार्क्सवादी-लेनिनवादी चट्टोपाध्याय का मानव प्रगति, विज्ञान और तर्क में पूरा भरोसा था। 8 मई 1993 के दिन उनके निधन के साथ जो शून्य पैदा हुआ, उसकी पूर्ति संभव नहीं है। ***(स्रोत फीचर्स)***